[2021] 5 S.C.R. 350

के.पी. नाटराजन एवं अन्य

बनाम

मुथलाम्मल एवं अन्य

(विशेष अनुमति याचिका)

(सी) संख्या 2492/2021

जुलाई 16, 2021

[न्यायमूर्ति इंदिरा बनर्जी एवं वि. रामसुब्रमन्यन]

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908: आदेश 32, नियम 3- याचिकाकर्ता द्वारा दायर विशिष्ट प्रदर्शन हेतु वाद - प्रतिवादियों का वकील के माध्यम से उपस्थिति दर्ज करने के उपरान्त भी मुकदमें में एकतरफा बने रहें, तीसरे प्रतिवादी को नाबालिग के रूप में वर्णित किया गया था जिसका प्रतिनिधित्व (नाबालिग के पिता) ने किया था- आदेश 32, नियम 3 के तहत याचिकाकर्ता द्वारा मुकदमें में दुसरे प्रतिवादी (नाबालिक के पिता) को संरक्षक के रूप में नियुक्ति हेतु आवेदन दायर दिया था। याचिकाकर्ता ने भुगतान किए गए राशि को सूद समेत वापसी हेतु एक अतिरिक्त राहत की मांग की गयी थी जो न्यायालय द्वारा विशिष्ट प्रदर्शन में राहत नहीं दिया जा रहा था। तथापि निम्न न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ता के पक्ष में विशिष्ट प्रदर्शन के राहत हेतु एकपक्षीय आदेश जारी किया गया था। निष्पादन कार्यवाही में भी प्रतिवादी के विरूद्ध में एक पक्षीय आदेश जारी किया गया था तथा वाद को स्वीकार किया गया था। जिसके बाद परिवादी उक्त एक पक्षीय आदेश को निरस्त करने हेतु एक आवेदन दायर

किया गया था। इस बीच, याचिकाकर्ताओं को बिक्री विलेख के निष्पादन के लिए 1,98,000 रुपये के गैर-न्यायिक स्टांप पेपर जमा करने के लिए कहा गया था। उन्होंने ऐसा किा और बिक्री विलेख निष्पादित किया गया। केवल इसके बाद ही उत्तरदाताओं ने एकपक्षीय आदेश को रद्द करने में 862 दिनों की हुए विलम्ब को माफ कर इसके लिए आवेदन दायर किया। न्यायालय द्वारा आवेदन को खारिज कर दिया गया था। पीड़ित उत्तरदाताओं ने उच्च न्यायालय के समक्ष सिसिवल संहिता की धारा 115 के तहत पुनरीक्षण याचिका दायर की- अभिभावक की नियुक्ति के बारे में संदेह पर विचार करते हुए, उच्च न्यायालय ने मूल अभिलेख की मांगी की। यह पाते हुए कि अभिभावक की नियुक्ति के लिए याचिका के साथ दायर आई.ए. को ठीक से निपटाया नहीं गया था और आदेश 32, नियम 3, के तहत नाबालिग के लिए अभिभावक की कोई नियुक्ति नहीं की गई थी, उच्च न्यायालय ने संविधान की धारा 227 के तहत जाँच करने की सामान्य शक्ति का इस्तेमाल किया और देरी के सवाल पर गौर किए बिना और यह जांच किए बिना कि देरी को माफ करने के लिए पर्याप्त कारण था, एकपक्षीय आदेश को रद्द कर दिया- यह सुनिश्चित करने के लिए कि डिक्री के बाद (या डिक्री के कारण) याचिकाकर्ता/डिक्री धारक लाभ से वंचित न हों।

के.पी. नाटराजन एवं अन्य बनाम मुथलाम्मल एवं अन्य

उच्च न्यायालय ने प्रतिवादियों को शर्त रखी कि उन्हें याचिकाकर्ताओं को लागत के रूप में 2,50,000/- रुपये का भुगतान करना होगा क्योंकि याचिकाकर्ताओं/डिक्री धारकों ने पहले ही स्टांप पेपर जमा कर दिए थे और बिक्री विलेख निष्पादित कर लिया था। उत्तरवादियों ने 2,50,000/- रू0 की लागत राशि जमा किया। परिणामस्वरूप, निम्न न्यायालय ने विवाद तय करने के बाद मुकदमें को सुनवाई के लिए ले लिया। पीड़ित याचिकाकर्ता ने तत्काल विशेष अनुमति याचिका दायर की- न्यायालय

ने यह माना कि इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि उत्तरदाताओं ने मुकदमे का बचाव करने के साथ - साथ निष्पादन की कार्यवाही में घोर लापरवाही की थी। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने निम्न न्यायालय से संचिका तलब करने के बाद पाया था कि वास्तव में , निम्न न्यायालय कानून द्वारा निर्धारित तरीके से नाबालिग के लिए अभिभावक नियुक्त करने में विफल रहा है। वास्तव में याचिकाकर्ता द्वारा आदेश 32, नियम 3 के तहत एक आवेदन दायर किया गया है। उक्त आवेदन निम्न न्यायालय द्वारा स्थगित कर दिया गया था- निम्न न्यायालय ने जिस तरह से आदेश 32, नियम 3 के तहत आवेदन का निपटारा किया वह अनुचित है और इसे बिल्कुल भी बरकरार नहीं रखा जा सकता है - यह सच है कि उच्च न्यायालय ने केवल परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 के तहत एक याचिका को खारिज करने के आदेश से उत्पन्न एक पुनरीक्षण याचिका पर विचार कर रहा था। लेकिन यह प्रक्रिया के किसी महत्वपूर्ण नियम के विशेष संदर्भ में रिकॉर्ड को देखने के लिए उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को छीन या कम नहीं करता है, खासकर जब यह व्यक्तियों जो विकलांगता से संबंधित किसी चीज से संबंधित हो। मद्रास की आदेश 32, नियम 3 में संशोधन की कठोर प्रकृति को शायद उस व्यापक क्षेत्राधिकार के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है जिसे उच्च न्यायालय ने लेटर्स पेटेंट के क्लॉज -17 और पैत्रीक क्षेत्राधिकार के तहत अपने मूल पक्ष पर प्रयोग किया था, जो कि एक न्यायालय आमतौर पर नाबालिगों के मामलों से निपटते समय अभ्यास करता है। इसलिए, मुकदमे में मूल अभिलेख को तलब करने और यह पता लगाने में उच्च न्यायालय की कार्रवाई में कोई अवैधता नहीं है कि नाबालिग प्रतिवादी के अभिभावक को आदेश 32, नियम 3 में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार उचित रूप से नियुक्त किया गया था या नहीं। यहां तक कि याचिकाकर्ताओं द्वारा उठाए गए किसी विशिष्ट विवाद के अभाव में भी। यह तर्क कि परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 के तहत एक याचिका को खारिज करने से उत्पन्न

पुनरीक्षण में, उच्च न्यायालय अनुच्छेद 227 के तहत शक्ति का उपयोग करके, एकपक्षीय आदेश को रद्द नहीं कर सकता है, स्वीकार्य नहीं है। यह बहुत अच्छी तरह से व्यवस्थित है कि अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय की शक्तियां नियम की धारा 115 के तहत शक्तियों से अतिरिक्त और व्यापक हैं। उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 227 को लागू करने और एकपक्षीय आदेश को रद्द करने में क्षेत्राधिकार की त्रुटि नहीं की थी। वास्तव में उच्च न्यायालय इस प्रश्न पर भी विचार कर रहा था कि क्या अभिभावक की उचित नियुक्ति के बिना किसी नाबालिग के खिलाफ पारित आदेश वास्तव में अमान्य है या क्या यह नाबालिग के खिलाफ स्थापित पूर्वाग्रह पर निर्भर करेगा। उच्च न्यायालय यह भी पाया गया कि इस मामले में नाबालिग पूर्वाग्रह से ग्रस्त था।

विशेष अनुमति याचिका खारिज करते हुए अदालत ने ऐसा माना:-

1. तथ्यों पर कोई विवाद नहीं है और इस निष्कर्ष से बचा नहीं जा सकता कि उत्तरवादियों ने मुकदमे का बचाव करने के साथ -साथ निष्पादन की कार्यवाही में घोर लापरवाही बरती है। लेकिन तथ्य यह है कि हालाँकि पक्षकार लापरवाह बने रह सकते हैं , लेकिन न्यायालय ऐसा नहीं कर सकता। उच्च न्यायालय ने निम्न न्यायालय से अभिलेख तलब करने के बाद पाया है कि वास्तव में, निम्न न्यायालय कानून द्वारा निर्धारित तरीके से तीसरे प्रतिवादी/नाबालिग के लिए अभिभावक नियुक्त करने में विफल रहा है। वास्तव में याचिकाकर्ताओं/वादियों द्वारा आई.ए. नं.-981/2013 में संहिता के आदेश 32, नियम 3 के तहत एक आवेदन दायर किया गया था। उक्त आवेदन को निम्न न्यायालय द्वारा 23.03.2014 को पारित एक आदेश द्वारा निष्पादित कर दिया गया था। (पारा 14) (358-डी.-जी.)

2. आदेश 32, नियम 3 संहिता की पहली अनुसूची से परिभाषित है। संहिता की धारा 121 के तहत, पहली अनुसूची के नियम ऐसे प्रभावी होंगे जैसे कि संहिता के मुख्य भाग में अधिनियमित किए गए हों जब तक कि भाग-ग् के प्रावधानों के अनुसार रद्द या परिवर्तित न किया जाए, जिसमें धारा 121 से 131 शामिल हैं। संहिता की धारा 122 के तहत उच्च न्यायालयों को उनके शक्तियों के अधीन सिविल अदालतों की प्रक्रिया को विनियमित करने के लिए पहली अनुसूची में सभी या किसी भी नियम को रद्द /बदलाव करने या जोड़ने का अधिकार दिया गया है। ऐसी शक्ति का प्रयोग करते हुए , मद्रास उच्च न्यायालय ने संहिता के आदेश 32 के नियम 3 को बनाया है, जो मूल रूप से जिस तरह से नियम बनाया गया था, उससे कहीं अधिक विस्तृत है। (पारा 15,16) (358-डी.-एच; 359-ए.-बी.)

3. आक्षेपित आदेश में न्यायाधीश ने संहिता के आदेश 32, नियम 3 को उसके मूल रूप में निकाल दिया है। लेकिन निम्न न्यायालय को समर्पित इसके आवेदन में मद्रास उच्च न्यायालय के आदेश 32 के तहत अधीनस्थ सिविल अदालतों में। केंद्रीय अधिनियम द्वारा आदेश 32 के नियम 3 में निर्धारित प्रक्रिया के नियमों और मद्रास उच्च न्यायालय के शक्तियों के अधीन सिविल अदालतों पर लागू नियम 3 के बीच बहुत अंतर है। नियमों के दो सेटों की तुलना से पता चलता है कि मद्रास उच्च न्यायालय के शक्तियों के अधीन न्यायालयों पर लागू नियम अधिक विस्तृत और कठोर भी हैं। (I) मद्रास उच्च न्यायालय के अधीनस्थ न्यायालयों पर लागू नियमों के नियम 3 के उप-नियम (1) और (2) "लागू नियम" अतिरिक्त आवश्यकताएं हैंय (II) 'लागू नियमों' के नियम 3 का उप-नियम

(3) मूल संहिता के नियम 3 के उप-नियम (1) का पुनरुत्पादन हैय (III) 'लागू नियमों' के नियम 3 का उप-नियम (3-A) केंद्रीय अधिनियम के उप-नियम (5) का पुनरुत्पादन है (IV) 'लागू नियमों' के नियम 3 का उप-नियम (7) केंद्रीय अधिनियम के नियम 3 के उप-नियम (4) का एक उन्नत संस्करण है। (पारा 17,18, 19) (359-बी.-सी; 362-जी.-एच.; 363-जी.-एच.; 364-ए.-बी.)

4. इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि उप -नियम (4), (5), (6) और 'लागू नियमों' के आदेश 32 के नियम 3 के उप-नियम (7) का एक हिस्सा कुछ अतिरिक्त आवश्यकताओं को निर्धारित करता है जो इस प्रकार हैं :- (I) जब वादी द्वारा अभिभावक की नियुक्ति के लिए आवेदन किया जाता है, तो यह उनकी उपयुक्तता के क्रम में, परिशिष्ट एच में दिए गए फॉर्म नंबर 11-ए में नोटिस की सेवा के लिए उनके पूर्ण पते के साथ व्यक्तियों की एक सूची निर्धारित करेगा, जो नाबालिग प्रतिवादी के अभिभावक के रूप में कार्य करने के लिए सक्षम और योग्य हैंय (II) अभिभावक की नियुक्ति के लिए आवेदन को एक शपथ पत्र द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए, न केवल इस तथ्य को सत्यापित करना चाहिए (जैसा कि केंद्रीय अधिनियम में है) कि प्रस्तावित अभिभावक को नाबालिग के प्रतिकूल विवाद वाले मामलों में कोई दिलचस्पी नहीं है, बल्कि यह भी होना चाहिए जब भी किसी प्राकृतिक या वास्तविक अभिभावक को कार्य करने की अनुमति नहीं दी जाती है, तो वास्तविक अभिभावक के नाम और पते और अन्य उपयुक्त व्यक्तियों के नाम और पते सहित अतिरिक्त विवरण बताते हुए अनुमति नहीं दी जाती है। (पारा 20) (364-बी.-डी.)

5. माना जाता है कि, न्यायाधीश ने इस मामले में सिविल कोर्ट द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया के बारे में संदेह के बाद सिविल कोर्ट से अभिलेख तलब किया और पाया कि सिविल कोर्ट आदेश 32, नियम 3 के अनुसार तीसरे प्रतिवादी के लिए अभिभावक नियुक्त करने में विफल रहा। संहिता की धारा 115(1) के तहत पुनरीक्षण में अभिलेख मंगाने और उसकी जांच करने की न्यायाधीश की शक्ति पर याचिकाकर्ताओं द्वारा संदेह या सवाल नहीं उठाया जा सकता है। यह सच है कि न्यायाधीश केवल परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 के तहत एक याचिका को खारिज करने के आदेश से उत्पन्न एक पुनरीक्षण याचिका पर विचार कर रहे थे। लेकिन यह प्रक्रिया के किसी महत्वपूर्ण नियम के विशेष संदर्भ में अभिलेख को देखने के उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को छीन या कम नहीं करता है , खासकर जब यह विकलांग व्यक्तियों से संबंधित किसी चीज से संबंधित हो। आदेश 32 के नियम 3 में मद्रास संशोधन की कठोर प्रकृति को शायद उस व्यापक क्षेत्राधिकार के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है जिसे उच्च न्यायालय ने लेटर्स पेटेंट के क्लॉज -17 और पैत्रीक क्षेत्राधिकार के तहत न्यायालय सामान्य रूप नाबालिगों के मामलों से निपटने के दौरान प्रयोग किया था। इसलिए, मुकदमे में मूल अभिलेखों को तलब करने और यह पता लगाने में उच्च न्यायालय की कार्रवाई में कोई अनियमितता नहीं है कि नाबालिग प्रतिवादी के अभिभावक को आदेश 32, नियम 3 में याचिकाकर्ताओं द्वारा उठाए गए किसी विशिष्ट विवाद के अभाव में भी निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार ठीक से नियुक्त किया गया था या नहीं। (पारा 21) (364-डी.-एच; 365-ए.)

6. यह तर्क कि स्वीकार्य नहीं है कि परिसीमा अधिनियम , 1963 की धारा 5 के तहत एक याचिका को खारिज करने से उत्पन्न पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय अनुच्छेद

227 के तहत शक्ति का उपयोग करके एकपक्षीय डिक्री को रद्द नहीं कर सकता है। यह बहुत अच्छी तरह से स्थापित है कि अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय की शक्तियाँ संहिता की धारा 115 के तहत शक्तियों के अतिरिक्त और व्यापक हैं। उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 227 को लागू करने और एकपक्षीय डिक्री को रद्द करने में क्षेत्राधिकार की गलती नहीं की। वास्तव में न्यायाधीश इस सवाल पर भी गए कि क्या अभिभावक की उचित नियुक्ति के बिना किसी नाबालिग के खिलाफ पारित डिक्री वास्तव में अमान्य है या क्या यह नाबालिग के खिलाफ पूर्वाग्रह स्थापित होने पर निर्भर करेगा। न्यायाधीश ने पाया कि इस मामले में, नाबालिग पूर्वाग्रह से ग्रस्त था। (पारा 22, 23) (365-ए.-बी, डी.-ई.)

सूर्य देव राय बनाम राम चंदर राय और अन्य (2003) 6 SCC 675: (2003) 2 Suppl. SCR 290 राधेश्याम एवं अन्य बनाम छवि नाथ और अन्य (2015) 5 SCC 423: (2015) 3 SCR 197 - संदर्भित।

लंका सन्यासिव लंका येरन नायडू 1929 Law Weekly 455; दिव्य दीप सिंह और अन्य बनाम राम बचन मिश्रा और अन्य (1997) 1 SCC 504: (1996) 7 Suppl. SCR 705; आनंदराम एवं अन्य बनाम माधोलाल एवं अन्य AIR 1960 Raj 189; रंगम्मल बनाम माइनर अप्पासामी 85 Law Weekly 574- प्रतिष्ठित।

ओसेफ जोसेफ बनाम थोमा ईथम्मा AIR 1956 TC 26 - अनुपयुक्त माना गया।

कानूनी संदर्भ

[2003] 2 Suppl. SCR 290 referred to Para 22

[2015] 3 SCR 197 referred to Para 22

[1996] 7 Suppl. SCR 705 distinguished Para 31

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: विषेष अनुमति याचिका सं0- 2492/2021

सी.आर.पी. एन.पी.डी. सं0- 959/2018 में दिनांक 14.09.2020 को मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश से।

एस. नागमुथु, वरिष्ठ अधिवक्ता, एम.पी. पार्थिबन, परिवादियों के अधिवक्तागण

एम.ए. चिन्नासैमी, सी. रूबावथी, एम. वीरारंगवन, चि. लीली सर्वेष्वर, वी. सेंथिल कुमार, पी. राजाराम, प्रतिवादियों के अधिवक्तागण।

न्यायमुर्ति वी. रामासुब्रमन्यन द्वारा पारित न्यायालय आदेश।

1. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में "संहिता) की धारा 115 के तहत दायर एक नागरिक पुनरीक्षण याचिका में, सिविल कोर्ट के एक आदेश को चुनौती दी गई, जिसमें एक विशिष्ट निष्पादन का एक पक्षीय कार्रवाई को रद्द करने की मांग से संबंधित था जिसमें 862 दिनों की देरी को माफ करने से इनकार कर दिया गया था। उच्च न्यायालय ने पाया कि एकपक्षीय डिक्री अमान्य थी, क्योंकि यह कोड के आदेश 32, नियम 3 के तहत विचार की गई प्रक्रिया के संदर्भ में विधिवत नियुक्त अभिभावक द्वारा नाबालिग का प्रतिनिधित्व किए बिना एक नाबालिग के खिलाफ पारित किया गया था। इसलिए उच्च न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत की अपनी शक्ति का

प्रयोग करते हुए एकपक्षीय डिक्री को इस शर्त पर रद्द कर दिया कि उच्च न्यायालय के समक्ष याचिकाकर्ता/प्रतिवादी प्रतिनिधित्व करते हुए 2,50,000/- रुपये की राशि का भुगतान करेंगे। स्टाम्प पेपर आदि खरीदने में डिक्री धारकों द्वारा पहले ही खर्च की गई राशि। उच्च न्यायालय के उक्त आदेश से व्यथित डिक्री धारक इस विशेष अनुमति याचिका में हमारे समक्ष उपस्थित हैं।

2. हमने याचिकाकर्ताओं/वादियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री एस . नागामुथु और उत्तरदाताओं/प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री आर. बालासुब्रमण्यन को सुना है।

3. बिक्री के समझौते के विशिष्ट निष्पादन के लिए याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर एक वाद ओ.एस. संख्या 264/2013। उत्तरदाताओं को विधिवत सम्मन दिए गए थे, लेकिन वकील के माध्यम से उपस्थिति में प्रवेश करने के बाद वे एक पक्षीय बने रहे। सिविल कोर्ट ने 08.04.2015 को मुकदमे में एकपक्षीय फैसला सुनाया।

4. इस स्तर पर एक तथ्य पर ध्यान देना प्रासंगिक हो सकता है, अर्थात, याचिकाकर्ताओं ने वैकल्पिक राहत के रूप में न्यायालय द्वारा अनुमति न देने की स्थिति में विशिष्ट प्रदर्शन की राहत भुगतान किए गए पैसे को 18% प्रति वर्ष ब्याज के साथ वापस करने का आदेश की मांग की गयी है। लेकिन ट्रायल कोर्ट ने बिना किसी कारण के यह माना कि याचिकाकर्ता विशिष्ट प्रदर्शन की प्राथमिक राहत के हकदार हैं।

5. याचिकाकर्ताओं द्वारा जैसा याचिका में दायर किया गया था - इसमें, तीसरे प्रतिवादी को "नाबालिग एस अरविंदराजन, उम्र लगभग 16 वर्ष, संपत कुमार का बेटा, जिसका

प्रतिनिधित्व पिता एम. संपत कुमार करते हैं, के रूप में किया गया था। इसलिए याचिकाकर्ताओं ने वादपत्र के साथ दूसरे प्रतिवादी (उसके पिता और दूसरे प्रतिवादी) को नाबालिग के अभिभावक के रूप में नियुक्त करने के लिए संहिता के आदेश 32, नियम 3 के तहत 2013 के आई.ए. सं.- 981 में एक आवेदन दायर किया था। जैसा कि उच्च न्यायालय ने उल्लेख किया है, सिविल कोर्ट ने दूसरे प्रतिवादी को नोटिस देने के बाद, आई.ए. सं0- 981/2013 में दिनांक 23.03.2014 को निम्नलिखित प्रभाव से एक आदेश पारित किया:-

> "बटटा का तामिला किया गया। नाबालिग के अभिभावक के तरफ से वकालतनामा दायर किया गया। इसलिए यह वाद निष्पादित किया जाता है।"

6. डिक्री के निष्पादन की मांग करते हुए याचिकाकर्ताओं ने ई .पी. संख्या 33/2015 दायर किया। निष्पादन याचिका में सभी उत्तरदाताओं को नोटिस दिए गए थे और निष्पादन याचिका दिसंबर-2015 में दो तारीखों और वर्ष 2016 में कई तारीखों पर सुनवाई के लिए आई थी। अंततः 18.10.2016 को निष्पादन याचिका में उत्तरदाताओं को एकपक्षीय ठहराया गया और याचिका की स्वीकृत दी गई।

7. इसके बाद प्रतिवादी ने निष्पादन याचिका में एकपक्षीय आदेश को रद्द करने के लिए नवंबर-2016 में एक आवेदन दायर किया। इसे वर्ष 2017 में ई.ए. सं0-40/2017 के रूप में क्रमांकित किया गया था।

8. लेकिन इस बीच याचिकाकर्ताओं को बिक्री विपत्र के लिए 1,98,000/- रुपये के मूल्य के गैर-न्यायिक स्टांप पेपर जमा करने के लिए कहा गया। उन्होंने ऐसा किया और वास्तव में न्यायालय द्वारा 04.01.2017 को एक विक्रय विपत्र बनाया गया।

के.पी. नाटराजन एवं अन्य बनाम मुथलाम्मल एवं अन्य

(न्यायमुर्ति वी. रामासुब्रमन्यन)

9. इसके बाद ही उत्तरदाताओं ने एकपक्षीय डिक्री को रद्द करने की मांग में 862 दिनों की देरी को माफ करने के लिए आई .ए0 नं0-142/2017 में एक आवेदन दायर किया। दिनांक 19.09.2017 को दायर इस आवेदन को सिविल कोर्ट ने 28.11.2017 के एक आदेश द्वारा मुख्य रूप से तीन आधारों पर खारिज कर दिया था। (I) देरी के लिए कोई उचित स्पष्टीकरण नहीं था, (II) यहां तक कि लिखित बयान भी आदेश 8, नियम 7 में निर्धारित समय के भीतर दाखिल नहीं किया गया था, और (III) और निष्पादन को एकपक्षीय रूप से आगे बढ़ाने की अनुमति देने के बाद और निष्पादन न्यायालय द्वारा बिक्री विलेख को निष्पादित करने की अनुमति देने के बाद, उत्तरदाता भारी देरी के लिए माफी नहीं मांग सकते हैं।

10. एकपक्षीय डिक्री को रद्द करने की मांग में देरी को माफ करने की याचिका खारिज होने से दुखी होकर, उत्तरदाताओं ने उच्च न्यायालय के समक्ष संहिता की धारा 115 के तहत एक

पुनरीक्षण याचिका दायर की। तीसरे प्रतिवादी के लिए अभिभावक की नियुक्ति के बारे में संदेह पर विचार करते हुए, विद्वान न्यायाधीश ने सिविल कोर्ट से मुकदमे में मूल अभिलेख की मांग किया। यह पाया गया कि तीसरे प्रतिवादी के लिए अभिभावक की नियुक्ति के लिए याचिका के साथ दायर आई.ए. नं0-981/2013 को ठीक से निपटाया नहीं गया था और आदेश 32, नियम 3 के तहत आवश्यक नाबालिग के लिए अभिभावक की कोई नियुक्ति नहीं की गई थी। विद्वान न्यायाधीश ने संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत अधीक्षण की सामान्य शक्ति का इस्तेमाल किया और देरी के सवाल पर गौर किए बिना और यह जांच किए बिना कि क्या देरी को माफ करने के लिए पर्याप्त कारण था, एकपक्षीय डिक्री को ही रद्द कर दिया। यह सुनिश्चित करने के लिए कि याचिकाकर्ता/डिक्री धारक किसी डिक्री के बाद (या डिक्री के कारण) लाभ से वंचित न हों, विद्वान न्यायाधीश ने उत्तरदाताओं को इस शर्त पर रखा कि उन्हें याचिकाकर्ताओं को लागत के रूप में 2,50,000/- रुपये का भुगतान करना होगा- यहां 16.10.2020 को या उससे पहले, चूंकि याचिकाकर्ताओं/डिक्री धारकों ने पहले ही 1,98,000/- रुपये के मूल्य के स्टांप पेपर जमा कर दिए थे और बिक्री विपत्र तैयार कर लिया था।

11. ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय के उपरोक्त आदेश के अनुसार , उत्तरदाताओं ने दिनांक 12.10.2020 को 2,50,000/- रुपये की लागत जमा कर दी। परिणामस्वरूप, ऐसा प्रतीत होता है कि सिविल कोर्ट ने मुद्दों को तय करने के बाद मुकदमे को सुनवाई के लिए ले लिया है। उत्तरदाताओं के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री आर बालासुब्रमण्यम ने कहा है कि मुकदमा अब पी.डब्लू.-1 की जांच के लिए रखा गया है।

12. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री एस. नागामुथु द्वारा व्यक्त उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश पर वार करने के मुख्य आधार हैं :- (I) कि उच्च न्यायालय को परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 के तहत एक आवेदन से उत्पन्न पुनरीक्षण याचिका में, एक पक्षीय डिक्री को रद्द नहीं करना चाहिए था, (II) न्यायालय उन उत्तरदाताओं के पक्ष में इक्विटी का आह्वान करने का भी हकदार नहीं था, जो घोर लापरवाही बरत रहे थे, पहले मुकदमे का बचाव करने में, फिर निष्पादन की कार्यवाही का बचाव करने में और फिर लगभग एक-पक्षीय डिक्री को रद्द करने की मांग में निष्पादन याचिका में पारित एकपक्षीय आदेश को रद्द करने की मांग का वर्ष और (III) यह उत्तरदाताओं द्वारा उठाए गए आधारों या तर्कों में से एक भी नहीं था- उच्च न्यायालय के समक्ष उनकी पुनरीक्षण याचिका में या तो संहिता के आदेश 31, नियम 3 के तहत सिविल कोर्ट की ओर से निर्धारित प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया था या विफलता के कारण प्रतिवादी/नाबालिग के साथ गंभीर पूर्वाग्रह या अन्याय हुआ है, यदि कोई हो।

13. उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री आर. बालासुब्रमण्यन ने जवाब में तर्क दिया कि अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय का पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार व्यापक प्रकृति का है और जब उच्च न्यायालय को पता चलता है कि सिविल कोर्ट ने हितों का ध्यान नहीं रखा है नाबालिग जो कार्यवाही में एक पक्ष था, उसके मामले में कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का पालन करते हुए, उच्च न्यायालय तकनीकी आधार पर अपनी आँखें बंद नहीं कर सकता।

14. हमने प्रतिद्वंद्वी विवादों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है। तथ्यों पर कोई विवाद नहीं है और इस निष्कर्ष से बचा नहीं जा सकता कि उत्तरदाताओं ने मुकदमे का बचाव करने के साथ - साथ निष्पादन की कार्यवाही में घोर लापरवाही बरती है। लेकिन तथ्य यह है कि हालाँकि पक्षकार लापरवाह बने रह सकते हैं, लेकिन न्यायालय ऐसा नहीं कर सकता। उच्च न्यायालय ने सिविल कोर्ट से अभिलेख मांग करने के बाद पाया है कि वास्तव में, सिविल कोर्ट कानून द्वारा निर्धारित तरीके से नाबालिग तीसरे प्रतिवादी के लिए अभिभावक नियुक्त करने में विफल रहा है। जैसा कि पहले बताया गया है , वास्तव में याचिकाकर्ताओं /वादियों द्वारा आई .ए. नं. 981/2013 में संहिता के आदेश 32, नियम 3 के तहत एक आवेदन दायर किया गया था। उक्त आवेदन को सिविल कोर्ट द्वारा 23.03.2014 को पारित एक आदेश द्वारा निष्पादित कर दिया गया था, जिसे हमने कहीं और से निकाला है। जिस तरीके से सिविल कोर्ट ने आदेश 32, नियम 3 के तहत आवेदन का निपटारा किया, वह बिना किसी संदेह के, अनुचित है और इसे खासकर मद्रास संशोधन के तहत बिल्कुल भी बरकरार नहीं रखा जा सकता है।

15. आदेश 32, नियम 3, संहिता की पहली अनुसूची में उपलब्ध है। संहिता की धारा 121 के तहत, पहली अनुसूची के नियम भाग-ग् के प्रावधानों के अनुसार रद्द या परिवर्तित होने तक संहिता के मुख्य भाग में अधिनियमित होने के समान प्रभावी होंगे, जिसमें धारा 121 से 131 शामिल हैं। संहिता की धारा 122 के तहत उच्च न्यायालयों को उनके अधीनस्थ निम्न अदालतों की प्रक्रिया को विनियमित करने के लिए पहली अनुसूची में सभी या किसी भी नियम को रद्द/बदलने या जोड़ने का अधिकार दिया गया है।

16. ऐसी शक्ति का प्रयोग करते हुए मद्रास उच्च न्यायालय ने संहिता के आदेश 32 के नियम 3 को बनाया है, जो मूल रूप से जिस तरह से नियम बनाया गया था उससे कहीं अधिक विस्तृत है।

17. आक्षेपित आदेश में विद्वान न्यायाधीश ने संहिता के आदेश 32, नियम 3 को उसके मूल रूप में निकाल लिया है। लेकिन आदेश 32 नियम 3 के अन्तर्गत जो मद्रास उच्च न्यायालय के अधीन सिविल अदालतों से संबंधित शक्ति से विषय में है। जो इस प्रकार है:-

"कौन वाद मित्र की हैसियत से कार्य कर सकेगा या वादार्थ संरक्षक नियुक्त किया जा सकेगा

(1) जो व्यक्ति स्वस्थयचित है और वयस्क है वह अवयस्क के वाद-मित्र या वादार्थ संरक्षक की हैसियत से कार्य कर सकेगा।

परन्तु यह तब जब कि ऐसे व्यक्ति का हित अवयस्क के हित के प्रतिकूल न हो और वाद-मित्र की दशा मे वह प्रतिवादी न हो या वादार्थ संरक्षक की दशा मे वह वादी न हो।

(2) नियुक्त या घोषित अभिभावकों को प्राथमिकता दी जाएगी और केवल दर्ज किए गए कारणों से ही उनकी जगह ली जाएगी। जहां किसी नाबालिग के पास सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित अभिभावक है, अभिभावक के अलावा कोई भी व्यक्ति नाबालिग के वाद-मित्र के रूप में कार्य नहीं करेगा या मुकदमे के लिए उसका अभिभावक नियुक्त नहीं किया जाएगा, जब तक कि न्यायालय, दर्ज किए

जाने वाले कारणों से, यह नहीं मानता है कि यह उसके लिए है। नाबालिग के कल्याण के लिए किसी अन्य व्यक्ति को कार्य करने या नियुक्त करने की अनुमति दी जाए, जैसा भी मामला हो।

(3) संरक्षकों की नियुक्ति न्यायालय द्वारा की जाएगी - जहां प्रतिवादी नाबालिग है, अदालत उसके नाबालिग होने के तथ्य से संतुष्ट होने पर , नाबालिग के मुकदमे के लिए संरक्षक के रूप में एक उचित व्यक्ति को नियुक्त करेगी।

(3।) उप-नियम *(3)* के तहत किसी नाबालिग के मुकदमे के लिए संरक्षक नियुक्त किया गया व्यक्ति, जब तक कि उसकी नियुक्ति सेवानिवृत्ति, निष्कासन या मृत्यु के कारण समाप्त न हो जाए , किसी भी अपीलीय या पुनरीक्षण न्यायालय में कार्यवाही और किसी डिक्री के निष्पादन में कोई कार्यवाही सहित मुकदमे से उत्पन्न होने वाली सभी कार्यवाही के दौरान उसी तरह जारी रहेगा ।

(4) नियुक्ति आवेदन पर और जहां आवश्यक हो प्रस्तावित अभिभावक को नोटिस के बाद होगी। - मुकदमे के लिए अभिभावक की नियुक्ति का आदेश नाबालिग के नाम पर या वादी की ओर से आवेदन पर प्राप्त किया जा सकता है। आवेदन , जहां यह वादी द्वारा है , उनकी उपयुक्तता के क्रम में , व्यक्तियों की एक सूची *(*फॉर्म संख्या *11*ए में नोटिस की सेवा के लिए उनके पूर्ण पते के साथ परिशिष्ट एच. हेरिटो में दी गई है *)* निर्धारित की जाएगी जो सक्षम हैं और नाबालिग प्रतिवादी के मुकदमे के लिए अभिभावक के रूप में कार्य करने के लिए योग्य।

न्यायालय, किसी विशेष मामले में दर्ज किए जाने वाले कारणों से, आवेदक को ऊपर उल्लिखित सूची प्रस्तुत करने से छूट दे सकता है।

(5) अभिभावक की नियुक्ति के लिए आवेदन के समर्थन में शपथ पत्र की सामग्री। - उपरोक्त उप-नियम में निर्दिष्ट आवेदन चाहे वादी द्वारा किया गया हो या नाबालिग प्रतिवादी की ओर से, इस तथ्य की पुष्टि करते हुए एक शपथ पत्र द्वारा समर्थित किया जाएगा कि प्रस्तावित अभिभावकों में से किसी का भी इसमें कोई हित नहीं है। नाबालिग के प्रतिकूल मुकदमे में विवाद के मामले और प्रस्तावित अभिभावक या अभिभावक इस प्रकार नियुक्त किए जाने के लिए उपयुक्त व्यक्ति हैं। हलफनामे में प्रत्येक मामले की परिस्थितियों के अनुसार आगे बताया जाएगा *(ए)* सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित किसी मौजूदा अभिभावक का विवरण, *(बी)* उस व्यक्ति का नाम और पता, यदि कोई हो, जो नाबालिग का वास्तविक अभिभावक है। *(सी)* व्यक्तियों के नाम और पते, यदि कोई हो, जो प्राकृतिक या वास्तविक अभिभावक या सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित अभिभावक को कार्य करने की अनुमति नहीं दिए जाने की स्थिति में, मुकदमे के लिए नाबालिग के रिश्ते या हित के कारण या अन्यथा, संरक्षक के रूप में कार्य करने के लिए उपयुक्त व्यक्ति हैं।

(6) अभिभावक की नियुक्ति के लिए आवेदन मृत पक्ष के कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने के लिए आवेदन से अलग होना चाहिए - किसी नाबालिग के मुकदमे के लिए अभिभावक की नियुक्ति के लिए एक आवेदन को मृत वादी या

प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने के लिए एक आवेदन के साथ नहीं जोड़ा जाएगा। आवेदन अलग-अलग याचिकाओं द्वारा होंगे।

(7) प्रस्तावित अभिभावक के अलावा नाबालिग प्रतिवादी में रुचि रखने वाले व्यक्तियों को दिए जाने वाले आवेदन की सूचना। -उपरोक्त उप-नियम *(4)* के तहत किसी भी आवेदन पर कोई आदेश नहीं दिया जाएगा, सिवाय इसके कि उस संबंध में सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित किए गए नाबालिग के किसी अभिभावक को नोटिस दिया जाए या जहां कोई अभिभावक नहीं है, वहां पिता या अन्य को नोटिस दिया जाए। नाबालिग के प्राकृतिक संरक्षक, या जहां कोई पिता या अन्य प्राकृतिक अभिभावक नहीं है, उस व्यक्ति को जिसकी देखभाल में नाबालिग है, और किसी भी आपत्ति को सुनने के बाद, जो इस उप-नियम के तहत नोटिस प्राप्त करने वाले किसी भी व्यक्ति की ओर से आग्रह किया जा सकता है।

(8) अभिभावक की नियुक्ति में देरी को कम करने के लिए विशेष प्रावधान - जहां आवेदन वादी द्वारा है, वह उपरोक्त उप-नियम *(4)* और *(5)* में निर्दिष्ट अपने आवेदन और शपथ पत्र के साथ, उस चरण में संभव सीमा तक भरे हुए दो प्रतियों में आवश्यक फॉर्म प्रस्तुत करेगा। उपरोक्त उप-नियम *(4)* में निर्दिष्ट सूची से न्यायालय द्वारा चुने जाने वाले प्रस्तावित अभिभावकों में से कम से कम दो को एक साथ नोटिस जारी करने के लिए एक विधिवत मुद्रांकित वाउचर के साथ

जिसमें सेवा के लिए निर्धारित शुल्क का संकेत दिया गया हो। भुगतान किया गया।

यदि प्रस्तावित अभिभावकों में से एक या अधिक अभिभावक कार्य करने के लिए अपनी सहमति दर्शाते हैं, तो न्यायालय उनमें से एक को नियुक्त करेगा और ऐसी नियुक्ति के तथ्य को पंजीकृत डाक द्वारा नियुक्त व्यक्ति को सूचित करेगा। यदि सेवा किए गए व्यक्तियों में से कोई भी कार्य करने के लिए अपनी सहमति नहीं दर्शाता है, तो न्यायालय ऊपर उप-नियम *(4)* में निर्दिष्ट सूची में नामित व्यक्तियों में से अन्य चयनित दो, यदि बहुत सारे हैं, को एक साथ सेवा देने के लिए आगे बढ़ेगा, लेकिन कोई नया नहीं उपनियम *(4)* के तहत आवेदन आवश्यक समझा जाएगा। आवेदक को प्रस्तावित अभिभावकों के पहले समूह द्वारा अनिच्छा की सूचना मिलने के तीन दिनों के भीतर, सेवा के लिए निर्धारित शुल्क का भुगतान करना होगा और विधिवत भरे हुए आवश्यक फॉर्म प्रस्तुत करने होंगे।

(9) किसी भी व्यक्ति को उसकी सहमति के बिना संरक्षक नियुक्त नहीं किया जाएगा।- किसी भी व्यक्ति को उसकी सहमति के बिना मुकदमे के लिए संरक्षक नियुक्त नहीं किया जाएगा। जब भी मुकदमे के लिए अभिभावक के रूप में किसी व्यक्ति के नाम का प्रस्ताव करते हुए कोई आवेदन किया जाता है , तो परिशिष्ट एच में दिए गए फॉर्म नंबर *11* ए में एक नोटिस प्रस्तावित अभिभावक को दिया जाएगा, जब तक कि आवेदक स्वयं प्रस्तावित अभिभावक या प्रस्तावित अभिभावक न हो।

(10) न्यायालयीय संरक्षक- कब नियुक्त किया जाए -उसे कोष में कैसे रखा जाए।- जहां न्यायालय किसी व्यक्ति को मुकदमे के लिए संरक्षक के रूप में कार्य करने के लिए उपयुक्त और इच्छुक नहीं पाता है , तो न्यायालय अपने किसी अधिकारी या न्यायालय के वकील को संरक्षक के रूप में नियुक्त कर सकता है और निर्देश दे सकता है कि उस अधिकारी द्वारा निष्पादन में होने वाली लागत अभिभावक के रूप में कर्तव्यों का वहन या तो पक्षों द्वारा या मुकदमे के किसी एक या अधिक पक्षों द्वारा या न्यायालय में किसी भी निधि से किया जाएगा जिसमें नाबालिग का हित है, और लागत के पुनर्भुगतान या भत्ते के लिए निर्देश दे सकता है। जैसा कि न्याय और मामले की परिस्थितियों की आवश्यकता हो सकती है।

(11) बचाव के लिए न्यायालय संरक्षक के अलावा किसी अन्य अभिभावक के लिए निधि।- जब एक नाबालिग प्रतिवादी के मुकदमे के लिए एक अभिभावक नियुक्त किया जाता है और अदालत में यह पेश किया जाता है कि अभिभावक के पास प्रतिवादी की ओर से मुकदमे के संचालन के लिए कोई या पर्याप्त धनराशि नहीं है और प्रतिवादी होगा अपने बचाव में पूर्वाग्रह से ग्रसित होकर, न्यायालय, समय≤ पर, वादी को अपने बचाव के उद्देश्य से अभिभावक को धन अग्रिम देने का आदेश दे सकता है और इस प्रकार अग्रिम किए गए सभी धन मुकदमे में वादी की लागत का हिस्सा होंगे। आदेश में निर्देश दिया जाएगा कि अभिभावक , जब भी निर्देश दिया जाए, अपने द्वारा प्राप्त धन का लेखा -जोखा अदालत में दाखिल करेंगे।

18. केंद्रीय अधिनियम द्वारा आदेश 32 के नियम 3 में निर्धारित प्रक्रिया के नियमों और मद्रास उच्च न्यायालय के अधीनस्थ निम्न अदालतों पर लागू नियम 3 के बीच बहुत अंतर है। आदेश 32, नियम 3 अपने मूल रूप में इस प्रकार हैः-

"3. नाबालिग प्रतिवादी के लिए अदालत द्वारा मुकदमे के लिए संरक्षक नियुक्त किया जाएगा -

(1) जहां प्रतिवादी नाबालिग है, अदालत, उसके नाबालिग होने के तथ्य से संतुष्ट होने पर, ऐसे नाबालिग के मुकदमे के लिए संरक्षक के रूप में एक उचित व्यक्ति को नियुक्त करेगी।

(2) मुकदमे के लिए अभिभावक की नियुक्ति का आदेश नाबालिग के नाम पर या वादी की ओर से आवेदन पर प्राप्त किया जा सकता है।

(3) इस तरह के आवेदन को इस तथ्य की पुष्टि करते हुए एक हलफनामे द्वारा समर्थित किया जाएगा कि प्रस्तावित अभिभावक को नाबालिग के प्रतिकूल मुकदमे में विवाद वाले मामलों में कोई दिलचस्पी नहीं है और वह इस तरह नियुक्त होने के लिए उपयुक्त व्यक्ति है।

(4) इस नियम के तहत किसी भी आवेदन पर कोई आदेश नहीं दिया जाएगा, सिवाय इसके कि उस संबंध में सक्षम प्राधिकारी द्वारा नियुक्त या घोषित किए गए नाबालिग के किसी अभिभावक को नोटिस दिया जाए, या, जहां ऐसा कोई अभिभावक नहीं है, वहां पिता को नोटिस दिया जाए, या जहां कोई पिता नहीं है, वहां माता को, या जहां कोई पिता या माता नहीं है, वहां नाबालिग के अन्य प्राकृतिक संरक्षक को, या, जहां कोई पिता, माता या अन्य प्राकृतिक अभिभावक नहीं है, वहां उस व्यक्ति को, जिसकी देखभाल में नाबालिग है है, और किसी भी आपत्ति को सुनने के बाद जो इस उप-नियम के तहत नोटिस प्राप्त करने वाले किसी भी व्यक्ति की ओर से आग्रह किया जा सकता है।

(4।) न्यायालय, किसी भी मामले में, यदि उचित समझे, तो नाबालिग को भी उप-नियम(4) के तहत नोटिस जारी कर सकता है।

(5) उप-नियम (1) के तहत किसी नाबालिग के मुकदमे के लिए संरक्षक नियुक्त किया गया व्यक्ति, तब तक जारी रहेगा जब तक कि उसकी नियुक्ति सेवानिवृत्ति , निष्कासन या मृत्यु से समाप्त नहीं हो जाती। मुकदमे से उत्पन्न होने वाली सभी कार्यवाही किसी भी अपीलीय या पुनरीक्षण न्यायालय और किसी डिक्री के निष्पादन में कोई कार्यवाही के दौरान कार्यवाही सहित जारी रहेगी।

19. नियम के दो श्रेणियों की तुलना से पता चलता है कि मद्रास उच्च न्यायालय के अधीनस्थल न्यायालयों पर लागू नियम अधिक विस्तृत और कठोर भी हैं। हम अविलम्ब नोट कर सकते हैं (।) कि मद्रास उच्च न्यायालय के अधीन न्यायालयों पर लागू नियमों के नियम 3 के उप-नियम (1) और (2) (इसके बाद सुविधा के उद्देश्य से "लागू नियम" के रूप में संदर्भित)), अतिरिक्त आवश्यकताएं हैं, (।।) 'लागू नियमों' के नियम 3 का उप-नियम (3) मूल संहिता के नियम 3 के उप-नियम (1) का विस्तारण है। (।।।) 'लागू नियमों' के नियम 3 का उप-नियम (3-ए) केंद्रीय अधिनियम के उप-नियम (5) का पुनरुत्पादन है; (।V) 'लागू नियमों' के नियम 3 का उप-नियम (7) केंद्रीय अधिनियम के नियम 3 के उप-नियम (4) का एक उन्नत संस्करण है।

20. अधिक महत्वपूर्ण रूप से उप-नियम (4), (5), (6) और 'लागू नियमों' के आदेश 32 के नियम 3 के उप-नियम (7) का एक हिस्सा कुछ अतिरिक्त आवश्यकताओं को निर्धारित

करता है जो इस प्रकार हैं: - (I) जब वादी द्वारा अभिभावक की नियुक्ति के लिए आवेदन किया जाता है, तो यह उनकी उपयुक्तता के क्रम में, फॉर्म संख्या 11-ए में नोटिस की सेवा के लिए उनके पूर्ण पते के साथ व्यक्तियों की एक सूची निर्धारित करेगा। परिशिष्ट एच , जो नाबालिग प्रतिवादी के अभिभावक के रूप में कार्य करने के लिए सक्षम और योग्य हैं, (II) अभिभावक की नियुक्ति के लिए आवेदन को एक हलफनामे द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए, न केवल इस तथ्य को सत्यापित करना चाहिए (जैसा कि केंद्रीय अधिनियम में है) कि प्रस्तावित अभिभावक को नाबालिग के प्रतिकूल विवाद वाले मामलों में कोई दिलचस्पी नहीं है, बल्कि यह भी होना चाहिए जब भी किसी प्राकृतिक या वास्तविक अभिभावक को कार्य करने की अनुमति नहीं दी जाती है, तो वास्तविक अभिभावक के नाम और पते और अन्य उपयुक्त व्यक्तियों के नाम और पते सहित अतिरिक्त विवरण बताते हुए।

21. माना जाता है कि, विद्वान न्यायाधीश ने इस मामले में ट्रायल कोर्ट द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया के बारे में संदेह के बाद ट्रायल कोर्ट से रिकॉर्ड तलब किया और पाया कि ट्रायल कोर्ट तीसरे प्रतिवादी के लिए अभिभावक नियुक्त करने में विफल रहा , जैसा कि अपेक्षित था। आदेश 32, नियम 3.

22. संहिता की धारा 115(1) के तहत संशोधन में रिकॉर्ड मंगाने और उसकी जांच करने की विद्वान न्यायाधीश की शक्ति पर याचिकाकर्ताओं द्वारा संदेह या सवाल नहीं उठाया जा सकता है। यह सच है कि विद्वान न्यायाधीश केवल परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 के तहत एक याचिका को खारिज करने के आदेश से उत्पन्न एक पुनरीक्षण याचिका पर विचार कर रहे थे। लेकिन यह प्रक्रिया के किसी महत्वपूर्ण नियम के विशेष संदर्भ में अभिलेख को देखने के उच्च

न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को छीन या कम नहीं करता है, खासकर जब यह विकलांग व्यक्तियों से संबंधित किसी चीज से संबंधित हो। आदेश 32 के नियम 3 में मद्रास संशोधन की कठोर प्रकृति को शायद उस व्यापक क्षेत्राधिकार के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है जिसे उच्च न्यायालय ने लेटर्स पेटेंट के क्लॉज -17 और पैत्रीक क्षेत्राधिकार के नाबालिगों के मामलों से निपटने के दौरान अपने मूल पक्ष में प्रयोग किया था, जो सामान्य रूप से एक न्यायालय होता है। इसलिए हमें तलब करने की उच्च न्यायालय की कार्रवाई में कोई अवैधता नहीं दिखती मुकदमे में मूल अभिलेख और यह पता लगाना कि याचिकाकर्ताओं द्वारा उठाए गए किसी विशिष्ट विवाद के अभाव में भी आदेश 32, नियम 3 में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार एक नाबालिग प्रतिवादी के अभिभावक को उचित रूप से नियुक्त किया गया था या नहीं।

23. यह तर्क कि परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 के तहत एक याचिका को खारिज करने से उत्पन्न पुनरीक्षण में, उच्च न्यायालय अनुच्छेद 227 के तहत शक्ति का उपयोग करके, एकपक्षीय डिक्री को रद्द नहीं कर सकता है ना ही अपील। यह बहुत अच्छी तरह से स्थापित है कि अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय की शक्तियाँ संहिता की धारा 115 के तहत शक्तियों के अतिरिक्त और व्यापक हैं। सूर्य देव राय बनाम राम चंदर राय और अन्य 2 में, यह न्यायालय इस हद तक चला गया कि अनुच्छेद 226 के तहत अधीनस्थ न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की गंभीर त्रुटियों को ठीक करने के लिए भी प्रमाण पत्र जारी किया जा सकता है। लेकिन जहां तक अनुच्छेद 226 का संबंध है, उक्त दृष्टिकोण की सत्यता पर एक अन्य न्यायालय द्वारा संदेह किया गया, जिसके परिणामस्वरूप तीन सदस्यीय पीठ को संदर्भित किया गया। राधे श्याम और अन्य बनाम छवि नाथ और अन्य, तीन सदस्यीय पीठ ने अनुच्छेद 226 के तहत क्षेत्राधिकार के

सवाल पर सूर्य देव राय (पूर्व) को खारिज करते हुए भी बताया कि अनुच्छेद 227 के तहत क्षेत्राधिकार अलग-अलग है। इसलिए, हम इस तर्क से सहमत नहीं हैं कि उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 227 को लागू करने और एकपक्षीय डिक्री को रद्द करने में क्षेत्राधिकार की त्रुटि की है।

24. यह ध्यान रखना आवष्यक हो सकता है कि नियम 3-ए को 1976 के सी.पी.सी. संशोधन अधिनियम 104 द्वारा आदेश 32 में शामिल किया गया था। यह वह नियम है जिसने पहली बार संहिता में नाबालिग के प्रति पूर्वाग्रह का प्रश्न पेश किया। लेकिन यह नियम 3-ए केवल उन मामलों पर लागू होता है जहां नाबालिग के मुकदमे के वाद-मित्र या अभिभावक को नाबालिग के मुकदमे के प्रतिकूल विषय में रुचि थी। यह संशोधन इस सवाल पर कुछ परस्पर विरोधी राय की अगली कड़ी था कि क्या उन मामलों में पारित डिक्री शून्य थी, जहां नाबालिग का प्रतिनिधित्व एक अभिभावक द्वारा किया गया था, जिसकी नाबालिग के प्रतिकूल मुकदमे की विषय वस्तु में रुचि थी।

25. दूसरे शब्दों में संसद ने आदेश 32, नियम 3 ए के तहत विशेष रूप से मामलों की एक श्रेणी के संबंध में पूर्वाग्रह के तत्व को पेश करने का फैसला किया। मौजूदा मामला उस श्रेणी में नहीं आता है। किसी भी स्थिति में, हमें इस मामले में उस प्रश्न पर जाने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि विद्वान न्यायाधीश ने पाया कि नाबालिग पूर्वाग्रह से ग्रस्त था।

26. सुनवाई के दौरान यह दिखाने का साहसिक प्रयास किया गया कि तीसरा प्रतिवादी बिल्कुल भी नाबालिग नहीं था। इस तरह के विवाद को निष्पादन आवेदन ई.ए. नं.-65/2017 में लंबे कारण शीर्षक के आधार पर उठाने की मांग की गई थी , जहां तीसरे प्रतिवादी को वर्ष

2017 में लगभग 24 वर्ष की आयु के व्यक्ति के रूप में वर्णित किया गया था। इसलिए यह तर्क देने की कोशिश की गई कि उसे एकपक्षीय डिक्री से बहुत पहले ही वयस्क हो जाना चाहिए था और इसलिए अभिभावक की नियुक्ति और डिक्री के अमान्य होने का सवाल ही नहीं उठता।

27. कहा गया है कि उक्त विवाद केवल खारिज किया जाना है। यहां याचिकाकर्ताओं ने ही वर्ष 2013 में मुकदमा दायर किया था, जिसमें तीसरे प्रतिवादी को नाबालिग बताया गया था और अभिभावक की नियुक्ति की मांग की गई थी। इसलिए किसी की अपनी दलीलों के विपरीत किसी भी नवीन तर्क के लिए कोई जगह नहीं है।

28. एक और तर्क उठाया गया कि किसी भी स्थिति में डिक्री को केवल तीसरे प्रतिवादी के खिलाफ ही रद्द किया जा सकता था, अन्य सभी के खिलाफ नहीं। लेकिन उक्त तर्क उस चीज पर लागू नहीं होता जो कानून में अमान्य है।

29. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील द्वारा लंका संन्यासी बनाम लंका येरन नायडू मामले में मद्रास उच्च न्यायालय की खंडपीठ के फैसले पर भरोसा करना गलत है। लंका सन्यासी (सुप्रा) में सवाल यह था कि क्या कोई व्यक्ति जो किसी मुकदमे में समझौता डिक्री पारित होने की तारीख पर बालिग हो गया था, वह बाद के मुकदमे में समझौता डिक्री को चुनौती देने का हकदार था। बाद के मुकदमे का फैसला प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा किया गया था और दूसरी अपील से निपटने के दौरान, लंका सन्यासी में उच्च न्यायालय ने कहा कि यह एक मात्र परिस्थिति थी कि एक नाबालिग प्रतिवादी ने मुकदमे की लंबित अवधि के दौरान वयस्कता प्राप्त कर ली थी, लेकिन बचाव जारी रखने के लिए निर्वाचित नहीं हुआ था। खुद को और अपने अभिभावक को मुकदमे से मुक्त करवाना, उसे मुकदमे में पारित किए गए निर्णय को उस पर बाध्यकारी नहीं घोषित करने में

सक्षम बनाने के लिए पर्याप्त नहीं है। उक्त मामले में आदेश 32, नियम 3 के प्रावधानों पर कुछ भी लागू नहीं हुआ।

30. ओसेफ जोसेफ बनाम थोमा ईथम्मा में त्रावणकोर कोचीन उच्च न्यायालय के फैसले पर याचिकाकर्ताओं ने भरोसा किया, याचिकाकर्ताओं की मदद करने से ज्यादा यह पुष्टि करता है कि विवादित आदेश में लिया गया दृष्टिकोण सही है।

31. दिव्य दीप सिंह और अन्य बनाम राम बचन मिश्रा और अन्य के मामले में फैसला इस सवाल से संबंधित था कि क्या आदेश 32, नियम 3 के तहत नाबालिग के लिए अभिभावक की नियुक्ति से प्राकृतिक अभिभावक का अधिकार छीन जाएगा। उत्तर बहुत स्पष्ट था और इसका मौजूदा मुद्दे से कोई लेना-देना नहीं है।

32. आनंदराम और अन्य बनाम माधोलाल और अन्य में राजस्थान उच्च न्यायालय के फैसले पर याचिकाकर्ताओं ने भरोसा किया। नाबालिग के प्रति पूर्वाग्रह के सवाल से निपटारा, विशेष रूप से नाबालिगों की ओर से पिता द्वारा लिखित बयान दाखिल करने और स्वीकार करने के संदर्भ में आंशिक प्रतिफल की प्राप्ति। रंगम्मल बनाम माइनर अप्पासामी मामले में इस तथ्य पर निष्कर्ष निकाला गया था कि मुकदमे में नाबालिग के हितों को पर्याप्त रूप से सुरक्षित रखा गया था। इसलिए याचिकाकर्ताओं द्वारा भरोसा किए गए इनमें से कोई भी निर्णय उनके उद्देश्य को आगे नहीं बढ़ाता है।

33. इसलिए न्यायालय अनुच्छेद 136 के तहत अपने हस्तक्षेप की शक्ति के अन्तर्गत उच्च न्यायालय के आदेश में कोई अवैधता नहीं पाती है। अतः यह विशेष अनुमति याचिका खारिज की जाती है।

देविका गुजराल

विशेष अनुमति याचिका खारिज